सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का काव्य (बी. ए. द्वितीय बर्ष, हिंदी प्रतिष्ठा)

डॉ. बिभा कुमारी, विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय, राजनगर

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का जन्म 15 सितंबर 1927 को बस्ती में हुआ था। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' के सात कवियों में ये भी शामिल हैं। इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं-

काठ की घंटियां, बाँस का पुल, एक सूनी नाव, गर्म हवाएँ, कुआनो नदी, जंगल का दर्द, खूंटियों पर टंगे लोग, क्या कहकर पुकारूँ, कोई मेरे साथ चले, मेघ आए, काला कोयला आदि।

काव्यसंग्रह 'खूंटियों पर टंगे हुए लोग' के लिए इन्हें 1983 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया।

कविता के अतिरिक्त इन्होंने कहानियां, उपन्यास, नाटक, यात्रा-संस्मरण, बाल-साहित्य आदि विधाओं में लिखा, साथ ही अनेक पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों का संपादन भी किया। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी इन्होंने पूरी जिम्मेदारी से काम किया, इनके समय को हिंदी पत्रकारिता का स्वर्णिम अध्याय माना जाता है। इन्होंने अध्यापन भी किया, आकाशवाणी में सहायक प्रोड्यूसर भी रहे। तत्पश्चात बाल साहित्य पत्रिका 'पराग' के संपादक रहे और 'दिनमान' पत्रिका की टीम में अज्ञेय जी के साथ भी इन्होंने काम किया। इन्होंने हिंदी बालसाहित्य को नई ऊंचाई पर पहुँचाया। बतूता का जूता, रानी रूपमती और राजा बाजबहादुर, भौं भौं इत्यादि इस परिप्रेक्ष्य में इनकी नामी रचनाएँ हैं। बालसाहित्य में इन्होंने बालमन को समझते हुए भावों का चित्रण किया है। भाषा भी बच्चों के मनोनुकूल है-

"इब्नबतूता पहन के जूता
निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई
घुस गई थोड़ी कान में

कभी नाक को, कभी कान को
मलते इब्नबतूता
इसी बीच में निकल पड़ा
उनके पैरों का जूता

उड़ते उड़ते जूता उनका
जा पहुँचा जापान में
इब्नबतूता खड़े रह गये
मोची की दुकान में"

बालसाहित्य का एक प्रमुख उद्देश्य होता है बच्चों के मनोमस्तिष्क, उनकी रुचि के अनुकूल बना कर विषय को सरल बनाकर बच्चों तक पहुँचाना और उनका मनोरंजन करना। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना इन सभी बिंदुओं पर सफल सावित हुए हैं-

“दौड़ी-दौड़ी

आई पकौड़ी।

छुन-छुन-छुन-छुन

तेल में नाची,

प्लेट में आ

शरमाई पकौड़ी

दौड़ी-दौड़ी

आई पकौड़ी

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना नई कविता को आगे बढ़ानेवाले प्रमुख कवियों में से एक है। निराला जी ने कविता की छंदों से मुक्ति की जो बात कही थी “मनुष्य की मुक्ति के समान कविता की भी मुक्ति होनी चाहिए, मनुष्य की मुक्ति है कर्मों के बंधन से छुटकारा पाना और कविता की मुक्ति है छंदों के बंधन से छुटकारा पा लेना।“

छायावाद के आखिरी दौर से ही छंदमुक्त कविताएँ स्वीकृत होने लगी थीं। प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के रास्ते नई कविता तक आते-आते कविता बिल्कुल ही नवीन कलेवर प्राप्त कर चुकी थी। अब कविता के लिए तुक या छंद अनिवार्य नहीं रह गया था।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने नई कविता को जीवंत रूप देने में भरपूर योगदान दिया। इन्होंने मुक्त छंद की कविताओं को नई पहचान दी। अब कविता के लिए तुक या छंद अनिवार्य नहीं रह गया था। इन्होंने नई कविता को आगे बढ़ाने में अपना पूर्ण सहयोग दिया। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपनी काव्य-रचना में प्रयोगधर्मिता को पर्याप्त महत्व दिया। अपने भीतर की पीड़ा, चीख-चिल्लाहट, क्रंदन को कविता में अत्यंत सहजता से चित्रित किया है-

“कुछ धुआँ

कुछ लपटें

कुछ कोयले

कुछ राख छोड़ता

चूल्हे में लकड़ी की तरह मैं जल रहा हूँ

मुझे जंगल की याद मत दिलाओ।”

‘पिछड़ा आदमी’ ‘शाम एक किसान’ आदि कविताओं में दलित और वंचित व्यक्ति की व्यथा को भी कागज़ पर ज्यों का त्यों उतार देते हैं-

“लीक पर वे चलें जिनके चरण दुर्बल और हारे हैं,

हमें तो जो हमारी यात्रा से बने ऐसे अनिर्मित पंथ प्यारे हैं।"

ये पंक्तियां कवि के वैयक्तिक जीवन एवं साहित्यिक जीवन-यात्रा को भी प्रकट करती है। इनके जीवन का पूर्वार्ध अभावों व संघर्षों में बीता। निरंतर संघर्ष से ये टूटे नहीं बल्कि उसे अपनी ऊर्जा का स्रोत बना लिया। इसीलिए इनकी कविताओं में अधिकांशतः विद्रोह का स्वर है पर कहीं-कहीं तड़प और टूटन भी है। वंचितों, शोषितों के प्रति होनेवाला अन्याय उन्हें विचलित कर देता है। उनकी मनोदशा विद्रोह का रूप ले लेती है और उनकी लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। हर विधा में उनकी सामाजिक चेतना अभिव्यक्त हुई है, परंतु कविता में विशेष रूप से सामाजिक चेतना का ओजपूर्ण आह्वान है। 'मैं सूरज को डूबने नहीं दूँगा' कविता में कवि कहते हैं-

"अब मैं सूरज को नहीं डूबने दूँगा।

देखो मैं ने कंधे चौड़े कर लिये हैं

मुट्ठियाँ मजबूत कर ली हैं

और ढलान पर एड़ियाँ जमाकर

खड़ा होना मैंने सीख लिया है।

घबराओ मत

मैं क्षितिज पर जा रहा हूँ,

सूरज ठीक जब पहाड़ी से लुढ़कने लगेगा

मैं कंधे अड़ा दूँगा

देखना वह वहीं ठहरा होगा।"

उनकी भाषा सरल-सहज है। कविता में ऐसी भाषा के प्रयोग से आमजन इनकी कविता से जुड़ पाता है। बोलचाल की दैनिक भाषा के माध्यम से कवि जनमानस में विशेष स्थान प्राप्त करते हैं-

तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ-साथ देशज और विदेशज शब्दों का प्रयोग भी कवि भरपूर करते हैं, जिसमें भाषा की सरलता-सहजता बनी रहती है। इस भाषा को समझने के लिए पाठक को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है। सरल भाषा में व्यंग्य शैली का प्रयोग करते हुए यथार्थ को प्रकट करते हैं-

"क्या गज़ब का देश है यह क्या गज़ब का देश है।

बिन अदालत औ मुवक्किल के मुकदमा पेश है

आँख में दरिया है सबके

दिल में है सबके पहाड़

आदमी भूगोल है जी चाहा नक्शा पेश है

क्या गज़ब का देश है यह क्या गज़ब का देश है।"

अपने नाटकों में इन्होंने गीतों की योजना भी की है। इन गीतों में भी कवि ने व्यंग्य का सहारा लिया है। सरकार द्वारा प्रजा के शोषण को कवि 'बकरी' के माध्यम से चित्रित करते हैं-

"बकरी को क्या पता था मशक बन के रहेगी,

अपने खिलाये फूलों से भी कुछ न कहेगी,

उसके ही खूं के रंग से इतराएगा गुलाब,

दे उसकी मौत जाएगी हर दिल अज़ीज ख्वाब।"

कवि शासन को कठघरे में खड़ा करते हैं। जनता के मूक बनकर सबकुछ सहते जाने की प्रवृत्ति को भी उजागर करते हैं। नाटक 'बकरी' में पात्र भिश्ती में स्वाधीनता के कई वर्ष पश्चात भी तकलीफ में रह रहे निचले वर्ग के मजदूर की झलक मिलती है तो 'मुक्ति की आकांक्षा' जैसी कविताओं में मानव मन का स्वतंत्रता के प्रति नैसर्गिक लगाव दिखाई देता है। उनके काव्य का रूमान और संवेदनशील पहलू भी है जो 'तुम्हारे साथ रहकर' जैसी कविता में उजागर हुआ है-

"तुम्हारे साथ रहकर

अक्सर मुझे ऐसा महसूस हुआ है

कि दिशाएँ पास आ गयी हैं,

हर रास्ता छोटा हो गया है,

दुनिया सिमटकर

एक आँगन-सी बन गयी है

जो खचाखच भरा है,

कहीं भी एकांत नहीं,

न बाहर, न भीतर।"

कुआनो नदी कविता ग्रामीण समाज का सजीव चित्र प्रस्तुत करती है-

"फिर बाढ़ आ गई होगी उस नदी में
पाक का फुटहिया बाजार बह गया होगा,
पेड़ की शाखों में बाँधे खटोले पर
बैठे होंगे बच्चे किसी काछी के

और नीचे कीचड़ में खड़े होंगे चौपाए
पूँछ से मक्खियाँ उड़ाते।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविताएँ व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों को सजीव रूप प्रदान करती है। आम जन के मनोभावों को प्रकट करती है। नई कविता में लघुमानव को केंद्र में प्रतिष्ठित करने की जो पहल रही है, उसे आगे बढ़ाने में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना पूर्णतः सफल हैं।